साथने सुणो रे कहूं एक वातडी, धणी मुने देता केटलू मान।
ए सुख मांहेंथी काढी करी, करमे दीधूं ततखिण राण।। १३ ।।

हे साथजी! मेरी एक बात सुनो। मेरे धनी मुझे बहुत मान देते थे। इस सुख में से निकालकर मेरे कर्मों ने तुरन्त ही मुझे वीरान कर दिया।

रणवगडमां साथ हूं एकली, विलखूं रात ने दिन।
जो कोई मानो तो कहे इंद्रावती, रखे कोई करो भारे करम।। १४ ।।

हे साथजी! इस जंगल में रात-दिन मैं अकेली बिलख-बिलखकर रो रही हूं। श्री इन्द्रावतीजी कहती हैं, यदि कोई मेरी बात मानो तो कोई खोटे कर्म नहीं करना (अहंकार नहीं करना)।

आ वस्ती वसे रे सुंदर सोहामणी, धणी बेठा नौतनपुरी मांहें।
एहज पुरी मांहें अमें रहूं, पण करमे न दिए मेलो क्यांहें।। १५ ।।

यह बस्ती बड़ी सुन्दर और सुहावनी बसी है। इसी नौतनपुरी में अपने धनी बैठे हैं। इसी पुरी में मैं भी बैठी हूं, परन्तु मेरे किए हुए कर्म मिलने नहीं देते।

अनेक विधे रे साथ हूं विलखती, पण मेलो न थाए एक खिण।
ए अचरज तमे जुओ साथजी, करम तणां रे ए छे गुण।। १६ ।।

हे साथजी! मैं अनेक तरह से बिलख-बिलखकर रो रही हूं, लेकिन एक पल के लिए भी मिलाप नहीं होता। हे सुन्दरसाथजी! यह बड़े आश्चर्य की बात देखो। यह मेरे किए कर्म का फल है।

वलीने वसेके रे वज्रलेपणा, मारा जेम करजो मा कोय।
एहज पुरी मांहें अमें रेहेता, रणवगडा जुओ केम होय।। १७ ।।

मेरे बज्रलेप जैसे कर्मों को देखो, मेरे जैसा कोई न करना, वरना एक ही नगर में हम रहते हैं फिर भी देखो मैं वीरान क्यों हो गई?

एणे सर्वे वज्रलेपणा, दुखने दीठा रे अनेक।
हवेने वालाजी रे दया करो, तो टले मारा वज्रलेप।। १८ ।।

इस बज्रलेप जैसे कर्मों के कारण मैंने अनेक दुःख देखे। हे वालाजी! अब आप कृपा करो, तो यह मेरा बज्रलेप टल जाए।

दयाने रखे तमे विसारो, इंद्रावती अलवी रे थाय।
एणे वचने वालोजी तेडसे, अंगना आवीने लाग से पाय।। १९ ।।

श्री इन्द्रावतीजी दुःखी होकर कहती हैं, हे मेरे धनी! तुम दया को मत भुलाओ। इन वचनों से वालाजी अवश्य ही बुला लेंगे। मैं आपकी अंगना हूं और आकर आपके चरणों में प्रणाम करूंगी।

॥ प्रकरण ॥ ३ ॥ चौपाई ॥ ५१ ॥

॥ सीत रुत (मगसर–पोस) ॥

राग धनाश्री

सीत रुत पिउजी तम विना, मूने अति अलखामणी थाय।
वाए रे उतर केरो वावरो, ते तां मारे तरवारे घाय।। १ ।।

हे पियाजी! आपके बिना यह शीत ऋतु मुझे अधिक चुभने वाली (दुःखदाई) है। उत्तर की हवा चलने लगी है, जो मेरे अंग में तलवार जैसा घाव करती है।

हो टाढीने रुत रे वालाजी सीतनी, टाढीने भीनी थाय रात।
एणी रुते केम विसारिए, अरधांग तमारी प्राणनाथ।। २ ।।

इस कड़कती शीत ऋतु में, हे वालाजी! रात भी शीत से भरी है। ऐसी ऋतु में हे मेरे प्राणनाथ! अपनी अंगना को क्यों भुलाते हो?

सीत रुते जल जोनी जामिया, तमे हजिए न ल्यो मारी सार।
जीवने काया नहीं तो मूकसे, ते तमे जोसो निरधार।। ३ ।।

शीत ऋतु में पानी जमकर बर्फ बन गया है। तुम अभी तक मेरी खबर नहीं लेते हो। अब मेरा जीव इस तन को छोड़ देगा। यह तुम निश्चित समझो।

दुःखने दोहेला घणां भोगव्या, पण विरह दुःख में न खमाय।
जीवडो रुए निस दिन पिऊ विना, आंसूडा ते अंग न माय।। ४ ।।

मैंने बड़े कठिन से कठिन दुःख भोगे हैं, परन्तु विरह का दुःख सहन नहीं होता है। प्रीतम के बिना मेरा जीव रात-दिन रोता है और आंखों से आंसू गिरना नहीं रुकता।

जलने सीतल नेणे वही गया, हवे अगिन थई अति जोर।
निस्वासा जेम धमण धमे, बलतो जीव करे रे बकोर।। ५ ।।

आंखों से शीतल जल बह गया है, अब शरीर में विरह की अग्नि धधक रही है जिस तरह से धौंकनी (धमनी) के समान मेरी सांस चल रही है, जिसमें मेरा जलता हुआ जीव पुकार कर रहा है।

एवी टाढी रुते रे दंतडा खडखडे, अंग चामी चरमाय।
एकने पिउजी तम विना, कई कई आवटणी थाय।। ६ ।।

ऐसी ठंडी ऋतु में दांत कटकटाते हैं (बजते हैं)। चमड़ी सिकुड़ गई है। हे मेरे धनी! आपके बिना मैं तरह-तरह से संकट सह रही हूं।

सीत रुते पत्र जेम हारव्या, जेम वसंत विना वनराय।
रंगने रूप रुत हरी लिए, पछे सूकीने भाखरिया थाय।। ७ ।।

शीत ऋतु में पत्ते झड़ जाते हैं और पूरा वन वीरान सा लगता है। जिस वन का रंग-रूप शीत ने छीन लिया हो और पीछे सूखकर पपड़ी (पत्ते के समान) हो गया हो।

आ रुतें अगनी जोर बले, वाएने अगिन टाढी वाए।
हेमने पडे रे बले सर्व वनस्पति, वलीने वसेके दाझे दाहे।। ८ ।।

हे वालाजी! यह शीत ऋतु की ठण्डक आग की तरह जलाती है। ऊपर से ठण्डी हवा उसे और भड़काती है। वन की वनस्पति पर पाला (हिम-बर्फ) पड़ने से सारी वनस्पति जल जाती है। उसी तरह मेरे अंग को आपके विरह की अग्नि इस शीत रूप में जलाती है।

तेम मारा जीवने तम विना, आ रुत एणी पेरे जाय।
हवे रखे राखो खिण तम विना, हूं वली वली लागूं छूं पाय।। ९ ।।

इस तरह से आपके बिना मेरी यह ऋतु बीत रही है। वालाजी! मैं बार-बार पैर पड़ती हूं। अब एक क्षण के लिए अपने से जुदा न रखो।

ए रुत वाला मूने एम थई, हजी दया तमने न थाय।
नौतनपुरी मेलो केम थासे, ज्यारे जीव निसरीने जाय।। १० ।।

हे वालाजी! मुझे यह ऋतु ऐसी कष्टदाई हो गई है। फिर भी आपके मन में दया नहीं आती। जब जीव ही निकल जाएगा तो नौतनपुरी में मिलाप कैसे होगा?

मायानो मेलो घणूं दुर्लभ, नहीं आवे ते बीजी वार।
रखे जाणे माया मेलो न थाय, ते माटे करूं छूं पुकार।। ११ ।।

माया में मिलना बड़ा कठिन है, क्योंकि दूसरी बार यहां नहीं आना है। मैं इसीलिए पुकार करती हूं कि कहीं ऐसा न हो कि मैं आपसे माया में न मिल सकूं?

मूं विरहणी नो विरह भाजजो, तमे छो दयावंत।
वलवलती करूं विनती, पछे आवसे ते मारो अंत।। १२ ।।

मुझ विरहिणी का विरह मिटा दो। आप तो बड़े दयावान हैं। बिलबिलाकर विनती करती हूं। नहीं तो इसके बाद मेरा मरण हो जाएगा।

वेल थासे जो ए वातनी, ते ता दुख करसो निरधार।
जो जीव काया मूकी चालसे, पछे करसो कायानी सार।। १३ ।।

इस बात में यदि देर हुई तो निश्चित ही आप दुःखी होंगे। यह जीव यदि शरीर को छोड़कर चला गया तो पीछे शरीर की ही सुध लोगे।

जीवने निसरता घणूं सोहेलूं, कांई दुख न उपजे लगार।
पण विमासी जो विचार करूं, तो माया मेलो केम छाडूं आधार।। १४ ।।

जीव का शरीर से निकलना बड़ा सरल है। इसको जरा भी दुःख नहीं होता, परन्तु सोच विचार करती हूं कि माया में मिले धनी को कैसे छोड़ दूं?

हवे कृपाने सागर तमे कृपा करो, जेम आवीने भीडूं अंग।
मूं विरहिणीना रे वालैया, मूने तेडीने रामत करो रंग।। १५ ।।

हे कृपा निधान! अब कृपा करो जिससे आपके अंगों से लिपट जाऊं। हे वालाजी! मुझ विरहिणी को बुलाकर खेलो। मस्ती से आनन्द मनाओ।

जो तमे भीडो जीवने जीवसूं, तो भाजे मारा अंगनी दाहे।
जीव थाय मारो सकोमल, जेम वसंत मौरे वनराए।। १६ ।।

हे वालाजी! यदि आप मेरे जीव से लिपटें तो मेरे अंग की जलन मिट जाए और मेरा जीव भी ऐसे खिल जाए जैसे बसन्त में सब पेड़ों में फूल खिल जाते हैं (मौर आ जाते हैं)।

वसंत आवे वन विलम करे, मारो जीव मौरे तत्काल।
मूने जेणी खिणें वालोजी मले, हूं तेणी खिण लऊं रंग लाल।। १७ ।।

बसन्त आने पर वन के पेड़ों पर फूल लगने में तो कुछ देर भी होती है, परन्तु मेरा जीव तो तुरन्त खिल जाएगा। जैसे ही वालाजी मुझे मिलेंगे उसी क्षण अपार आनन्द से भर जाऊंगी।

जेम रंग लिए रे ममोलो, मेह बूठे तत्काल।
तमने मले हूं रंग एम लऊं, इंद्रावती ना आधार।। १८ ।।

हे वालाजी! मेघ की बूंदें पड़ते ही बीर बहूटी (गौरी गायें-गोकल गायें) जैसे मखमल की तरह लाल रंग की हो जाती है। आपके मिलने पर श्री इन्द्रावतीजी कहती हैं कि मैं भी ऐसे ही लाल रंग ले लूंगी (लाल हो जाऊंगी)।

इंद्रावती आयत करे, मलवाने उलास।
एणे वचने वालोजी तेडसे, जइ करसूं वालाजी सों विलास।। १९ ।।

श्री इन्द्रावतीजी मन में उमंग भर मिलने की चाहना से कहती हैं कि इन वचनों से वालाजी बुला लेंगे और मैं जाकर वालाजी से आनन्द करूंगी।

।। प्रकरण ।। ४ ।। चौपाई ।। ७० ।।

।। रुत वसंतनी (फागुन-चैत) ।।

राग वसंत

रुतडी आवी रे मारा वाला, वसंत रुत रलियामणी।
तम विना मारा धणी धामना, लागे अलखामणी।। १ ।।

हे मेरे वालाजी! बड़ी मनभावनी बसन्त ऋतु आई है, किन्तु आपके बिना दुःखदाई लगती है।

तमे पडदा पाछा कीधां पछी, वली आवी ते आ वसंत।
ते पछी तमसूं रमवानी, लागी छे खरी मूने खंत।। २ ।।

आपने मुंह पर पर्दा कर लिया था (प्रणाम स्वीकार नहीं किया)। उसके बाद फिर यह बसन्त ऋतु आई है। इस ऋतु में आपसे खेलने की मुझे बड़ी चाहना है।

हवे ततखिण तेडजो मारा वाला, आ रुत एकला न जाय।
धणी विना कामनी घणूं कलपे, रोता ते वाणू वाय।। ३ ।।

हे मेरे धनी! अब आप तुरन्त बुलाना जिससे यह ऋतु भी अकेले न बीते। पति के बिना पत्नी बिलख-बिलख कर रोती है और रोते-रोते सवेरा होता है।

दिन दोहेला जाय घणूं मूने, वली वसेके वसंत।
ते तमे जाणो छो मारा वाला, जे विध जीव ने वहंत।। ४ ।।

मेरे खास कर यह बसन्त ऋतु के दिन बड़ी कठिनाई से बीत रहे हैं। हे मेरे वालाजी! मेरा जीव जिस तरह से सहन कर रहा है, उसे आप अच्छी तरह से जानते हैं।

रुत मांहें रुत वसंत घणूं रूडी, जेमा मौरे वनराय।
विध विधना रंग लेरे वेलडियो, वनतणे कंठडे वलाय।। ५ ।।

सभी मौसमों में बसन्त का मौसम सर्वश्रेष्ठ है। जिसमें सम्पूर्ण वन कोपल छोड़ता है और बेलें पेड़ों से लिपटी हुई तहर-तरह के रंगों से सजती हैं।

एणी रुते एकलडी मूने, केम मूको छो प्राणनाथ।
जीव सकोमल कूपल मेले, रमवा स्यामलियाने साथ।। ६ ।।

हे मेरे प्राणनाथ! इस ऋतु में मुझे अकेला क्यों छोड़ते हो? मेरा जीव भी इसी तरह छोटी-छोटी कोंपल आपके साथ खेलने से छोड़ेगा।